भारतीय संस्कृति, शिक्षा और दर्शन

विभिन्न संकल्पनाएं

सम्पादक : डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

भारतीय संस्कृति, शिक्षा और दर्शन

विभिन्न संकल्पनाएँ

सम्पादक :

डॉ. दिनेश चंद्र शर्मा

Ph.D., D.Lit. (Sub.)

निदेशक, कॉम्पिटिशन प्लस ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन,
अजमेर

Books n Books

51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001

प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
Books n Books
51/1509, आचमन, वेदविहार,
लोहाखान, अजमेर-305001
ई-मेल : bnbajmer@gmail.com

संस्करण
प्रथम 2025

ISBN : 978 - 81 - 993854 - 7 - 4

मूल्य - 300/-

रचना -
भारतीय संस्कृति, शिक्षा और दर्शन विभिन्न संकल्पनाएँ

सम्पादक -
डॉ. दिनेश चंद्र शर्मा

आवरण -
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स, अजमेर

मुद्रक -
श्री श्याम ऑफसेट, किशनगढ़

भारतीय संस्कृति के मूल स्रोत, पुरातात्विक, पुरालिपीय कला एवं शिलालेख

डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबेल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय संस्कृति अत्यंत बहुरंगी, विस्तृत और जीवंत है। इसका प्रचार और प्रसार न केवल भारत में, बल्कि हिमालय, हिन्दूकुश पर्वत और समुद्र पार दूर-दूर तक फैला। यह सांस्कृतिक प्रसार केवल भौगोलिक सीमाओं तक सीमित नहीं, अपितु समय और युग के परिवर्तनों को भी पार करते हुए अपनी अविरल धारा में जीवित रहा। भारतीय संस्कृति की यह व्यापकता और गहराई हमें विभिन्न क्षेत्रों की कला, साहित्य, भाषा और धार्मिक प्रथाओं में स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है।

भारतीय संस्कृति के अध्ययन के लिए इसके स्रोतों का अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है। साहित्य, धर्मग्रंथ, यात्रा विवरण और अन्य लिखित सामग्री इसके सबसे प्राचीन और महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं। इनमें न केवल धार्मिक और आध्यात्मिक विचारों का समावेश है, बल्कि सामाजिक, नैतिक, राजनीतिक और आर्थिक जीवन के नियम और आदर्श भी स्पष्ट रूप से मिलते हैं।

इसके अतिरिक्त, भारतीय संस्कृति के अन्य महत्त्वपूर्ण स्रोत पुरातात्विक अवशेष, शिलालेख और पुरालिपि हैं। ये न केवल तत्कालीन जीवन और समाज की झलक प्रस्तुत करते हैं, बल्कि धार्मिक, प्रशासनिक और सांस्कृतिक प्रगतियों का स्थायी प्रमाण भी प्रदान करते हैं। इन स्रोतों से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति केवल विचारधारा नहीं, बल्कि जीवित और गतिशील प्रक्रिया रही है, जो समय और परिस्थिति के अनुसार स्वयं को ढालती रही।

उदाहरण के लिए, काठियावाड़ के सुदर्शन झील का वर्णन करते हुए कवियों ने काव्य में नदियों और समुद्र का प्रतीकात्मक रूप प्रस्तुत किया। यहाँ नदियों को पत्नी और समुद्र को पति के रूप में दर्शाया गया, साथ ही नदियों की दो शाखाओं से समुद्र से मिलने की उपमा दी गई, जो प्रकृति और मानव जीवन के सांस्कृतिक और सौंदर्यबोध को स्पष्ट करती है। इसी प्रकार, गुप्त सम्राट कुमारगुप्त प्रथम के समय के प्रसिद्ध काव्यकार वात्स भट्ट ने दशपुर नगर का विस्तृत और मनोहारी वर्णन किया,

जिसमें नगर को कैलाश पर्वत की अट्टालिकाओं से युक्त रूप में प्रस्तुत किया गया। यह दर्शाता है कि भारतीय समाज और संस्कृति ने अपने नगरों, वास्तुकला और सौंदर्यबोध को कितनी गहराई और सूक्ष्मता से अभिव्यक्त किया।

साहित्यिक स्रोतों के साथ-साथ शिलालेख और पुरातात्विक अवशेष भारतीय संस्कृति के अन्य महत्त्वपूर्ण स्तंभ हैं। ये हमें समाज की धार्मिक सहिष्णुता, प्रशासनिक व्यवस्था, सामाजिक जीवन, व्यापारिक गतिविधियाँ और राजनीतिक घटनाएँ स्पष्ट रूप से दिखाते हैं। उदाहरणस्वरूप, अशोक के धर्मलेख, लुम्बिनी लेख और समुद्रगुप्त के प्रयाग स्तम्भ लेख न केवल ऐतिहासिक घटनाओं का प्रमाण हैं, बल्कि इनसे भारतीय संस्कृति के सहिष्णु और समन्वयात्मक मूल्य भी स्पष्ट होते हैं।

इसके अतिरिक्त, भारतीय संस्कृति में लेखन और लिपि का महत्त्व अत्यंत उच्च है। लेखन कला ने पीढ़ी दर पीढ़ी ज्ञान, अनुभव और संस्कृति का संप्रेषण सुनिश्चित किया। प्रारंभिक लेखन ताड़पत्र, कागज, काष्ठ, पत्थर, चर्म, धातु और ईंट पर होता था। पाणिनी ने अपनी अष्टाध्यायी में लेखन कला और ग्रंथों का उल्लेख किया। ह्वेनसांग और अलबरूनी जैसे विदेशी विद्वानों ने भारत में लेखन कला की प्राचीनता की पुष्टि की। सिन्धु घाटी (हड़प्पा और मोहनजोदड़ो) की मुद्राएँ, ताबीज और अभिलेख सामाजिक व्यवस्था और आर्थिक जीवन का विवरण प्रदान करते हैं।

भारतीय संस्कृति के स्रोत केवल लिखित या स्थापत्य ही नहीं, बल्कि इसके लोकाचार, रीति-रिवाज, संगीत, नृत्य, और लोककथाएँ भी हैं। ये पीढ़ी दर पीढ़ी सांस्कृतिक ज्ञान, सामाजिक आदर्श और नैतिक मूल्य संप्रेषित करते हैं। इन सभी स्रोतों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति सम्पूर्ण जीवन दर्शन के रूप में विकसित हुई, जिसमें धर्म, कला, साहित्य, नैतिकता और सामाजिक व्यवस्था का एकीकृत योगदान रहा।

नगरों के विषय में प्राचीन भारतीय अभिलेखों और लेखों से हमें विस्तृत जानकारी मिलती है। इन अभिलेखों में नगरों की भौगोलिक स्थिति, नगर निर्माण, वास्तुकला, प्रशासनिक व्यवस्था, सामाजिक जीवन और धार्मिक गतिविधियों का स्पष्ट विवरण प्राप्त होता है। ये अभिलेख न केवल ऐतिहासिक प्रमाण हैं, बल्कि भारतीय संस्कृति की संपूर्ण जीवन शैली और सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना को भी उजागर करते हैं।

अभिलेखों के प्रकार मुख्यत: निम्नलिखित हैं:-

(1) धार्मिक लेख :- इन लेखों में धर्म और धार्मिक क्रियाओं का विवरण मिलता है। इनका उद्देश्य धार्मिक विचारों का प्रचार-प्रसार करना और समाज में नैतिक उपदेश देना था। उदाहरण के लिए, सम्राट अशोक के धर्मलेख में बौद्ध धर्म की

शिक्षा, अहिंसा, न्याय और सहिष्णुता के सिद्धांत स्पष्ट किए गए हैं। इन लेखों से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में धार्मिक सहिष्णुता और नैतिकता को अत्यंत महत्व दिया जाता था।

(2) स्मारक लेख :- शासक जब किसी महत्वपूर्ण घटना या उपलब्धि को स्थायी रूप से अंकित कराना चाहते थे, तब उसे स्मारक लेख कहा जाता था। उदाहरणस्वरूप, अशोक का लुम्बिनी लेख जिसमें भगवान बुद्ध के जन्म स्थल का उल्लेख है। ये लेख ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और नगरों, मंदिरों और सामाजिक जीवन की संरचना की जानकारी देते हैं।

(3) प्रशस्ति लेख :- इनका उद्देश्य शासकों की प्रशंसा करना और उनकी उपलब्धियों को स्थायी रूप से अंकित करना था। उदाहरण हैं यशोधर्मन का मंदोशुक लेख और समुद्रगुप्त का प्रयाग स्तम्भ लेख। समुद्रगुप्त की प्रशस्ति से हमें गुप्तकालीन संस्कृति, प्रशासनिक कुशलता और धार्मिक सहिष्णुता का सटीक चित्र प्राप्त होता है। इन अभिलेखों में वैदिक यज्ञ, बौद्ध संघों को दान देने और शैव-वैष्णव धार्मिक परंपराओं का विवेचन भी दृष्टिगोचर होता है।

(4) आज्ञापत्र :- शासकों द्वारा जारी किए गए आदेश पत्र इस श्रेणी में आते हैं। ये प्रशासनिक और कानूनी निदेर्शों का प्रमाण हैं। उदाहरणस्वरूप, नालंदा के ताम्रपत्र और दामोदरपुर के आज्ञापत्र। इन अभिलेखों से शासक और राज्य प्रशासन की संरचना तथा सामाजिक और धामिज्क व्यवस्थाएँ स्पष्ट होती हैं।

(5) दानपत्र :- दान या धर्मार्थ कार्यों को प्रमाणित करने के लिए जारी किए गए पत्र। उदाहरण के लिए, बाराबर की गुफाओं का लेख। इन लेखों से धार्मिक गतिविधियों और दान-प्रदाय की व्यवस्था की जानकारी मिलती है।

इन अभिलेखों का भारतीय संस्कृति पर अत्यधिक प्रभाव है। साहित्य के साथ इनका महत्त्व कम प्रतीत हो सकता है, किंतु ये सांस्कृतिक और ऐतिहासिक जानकारी का स्थायी स्रोत हैं। यदि अशोक के लेख न होते, तो हमें अशोककालीन समाज की धार्मिक सहिष्णुता और प्रशासनिक कुशलता की जानकारी प्राप्त नहीं होती। इसी प्रकार, समुद्रगुप्त की प्रशस्तियों से गुप्तकालीन संस्कृति का उत्कर्ष और उसके धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्श स्पष्ट होते हैं।

इन अभिलेखों से यह भी ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत में राजदूत और अंतर्राष्ट्रीय संबंध कितने सुव्यवस्थित थे। तीसरी सदी से ही भारतीय राजदूतों की नियुक्ति का विवरण मिलता है, और पाल और चोल साम्राज्यों के अभिलेखों से पूर्वी द्वीप समूहों और पड़ोसी देशों के साथ व्यापार और सांस्कृतिक संपर्क का प्रमाण मिलता है। चौथी सदी के चम्बा अभिलेख में पुरुष मेघ का विवरण मिलता है, जो

नगरों के प्राचीन सामाजिक और धार्मिक जीवन का परिचय कराता है।

इस प्रकार, नगरों और अभिलेखों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति विविधता में एकता, धर्म, प्रशासन, सामाजिक जीवन और कला-संस्कृति का समेकित दर्शन प्रस्तुत करती है। ये अभिलेख केवल ऐतिहासिक प्रमाण नहीं, बल्कि भारतीय जीवन दर्शन और संस्कृति की जीवित झलक हैं।

भारत के ब्राह्मणों और बौद्ध धर्माचार्यों ने भारतीय संस्कृति का प्रचार और प्रसार न केवल देश के भीतर बल्कि बाह्य क्षेत्रों में भी किया। उनके प्रयासों का प्रमाण अभिलेखों और पुरालिपियों के माध्यम से मिलता है। मध्य एशिया के अभिलेख इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि भारत की सांस्कृतिक और धार्मिक चेतना कितनी व्यापक और प्रभावशाली थी। इन अभिलेखों से न केवल धार्मिक और दार्शनिक दृष्टिकोण स्पष्ट होते हैं, बल्कि समाज, शासन, अर्थव्यवस्था और नगर जीवन के विविध पक्षों का भी अध्ययन संभव होता है।

भारतीय संस्कृति में लिपि और पुरालिपि का स्थान अत्यंत महत्त्वपूर्ण रहा है। यह केवल लेखन या अभिलेखन का माध्यम नहीं था, बल्कि यह संस्कृति के संरक्षण और संवहन का आधार था। पुरालिपि शास्त्र ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी मानव जाति की धरोहर, अनुभव और सामाजिक-सांस्कृतिक ज्ञान को संरक्षित करने का कार्य किया। इसके माध्यम से संस्कृति का विस्तार और ज्ञान का प्रसार संभव हुआ। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि संस्कृति के मानवीय और ऐतिहासिक अंकन के सही मूल्यांकन के लिए पुरालिपि शास्त्र ही सबसे ठोस और विश्वसनीय स्रोत है।

भारतीय समाज में भाषा और लिपि का गहरा संबंध है। भाषा के बिना संस्कृति का निर्माण असंभव है, क्योंकि संस्कृति के भाव और मानवीय अनुभूतियों को शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करना आवश्यक होता है। शब्दों को लिपि के रूप में अंकित करना ही वह प्रक्रिया थी जिससे भावों, ज्ञान और अनुभवों का संचरण संभव हुआ।

इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान देने वालों में श्री डब्ल्यू. जी. वुलर और महामहोपाध्याय पंडित गौरीशंकर हीराचंद ओझा का विशेष स्थान है। इन्होंने पुरालिपि के अध्ययन और भारतीय संस्कृति के ऐतिहासिक तथ्यों के शोध में महत्वपूर्ण कार्य किया। इनके अध्ययन ने यह स्पष्ट किया कि पुरातत्व, अभिलेख और लिपि के माध्यम से भारतीय संस्कृति की ऐतिहासिक, धार्मिक और सामाजिक दृष्टि का वैज्ञानिक मूल्यांकन संभव है।

पुरालिपि और अभिलेख न केवल इतिहास और साहित्य का स्रोत हैं, बल्कि वे भारतीय समाज की आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक जड़ों का सजीव प्रमाण

भी प्रस्तुत करते हैं। यह क्षेत्र हमें यह समझने में सहायता करता है कि कैसे भारतीय संस्कृति ने समय के साथ अपनी बहुरंगी, सहिष्णु और समन्वयशील विशेषताओं को बनाए रखा और इसे निरंतर विकसित किया।

भारतीय संस्कृति में लेखन और अभिलेखन का महत्व केवल प्रशासनिक या धामिज़्क आवश्यकताओं तक सीमित नहीं था, बल्कि यह समाज, धर्म, कला, साहित्य और विज्ञान के समग्र विकास का आधार भी था। भारतीय समाज ने प्राचीन काल से ही ज्ञान को संग्रहित करने और उसे भावनाओं, विचारों और अनुभवों के रूप में आने वाली पीढ़ियों तक पहुँचाने के लिए लेखन का उपयोग किया। इस संदभज़ में लेखन केवल सूचना का साधन नहीं, बल्कि सामाजिक-आर्थिक और सांस्कृतिक जीवन का दर्पण भी था।

लेखन के विभिन्न माध्यमों में ताड़पत्र, पत्तल, काष्ठ, कपड़ा, पत्थर, चर्म, ईंट, धातु और औजार शामिल थे। उदाहरण के लिए, ताड़पत्र और पत्तल पर लिखी गई पांडुलिपियाँ धार्मिक ग्रंथ, विज्ञानिक विचार और साहित्यिक काव्य संरचनाओं का महत्वपूर्ण स्रोत रही हैं। पत्थर और धातु पर खुदे शिलालेख शासकों के प्रशासनिक, धार्मिक और सामाजिक आदेशों का प्रमाण प्रस्तुत करते थे। इन अभिलेखों से हम अशोक और समुद्रगुप्त जैसे शासकों के कार्य, उनकी नीतियाँ और धमज़-सहिष्णुता का विवरण प्राप्त कर सकते हैं।

विदेशी विद्वानों ने भी भारतीय लेखन की प्राचीनता को स्वीकार किया है। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भारतीय प्राचीन ग्रंथों और अभिलेखों का उल्लेख किया, जबकि अरबी विद्वान अलबरूनी ने भारत में लेखन कला की प्राचीनता पर प्रकाश डाला। पाणिनी ने अपनी प्रसिद्ध अष्टाध्यायी में लिपि, लिपिकार और ग्रंथ शब्दों का प्रयोग किया, जिससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में लेखन का प्राचीन और व्यवस्थित प्रयोग होता रहा। यह लेखन धार्मिक, सामाजिक, प्रशासनिक और आर्थिक जीवन के नियमों को संरक्षित करने के साथ-साथ संस्कृति और सभ्यता के विकास में भी योगदान करता रहा।

सिन्धु घाटी की सभ्यता में हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से प्राप्त मुद्राएँ, ताबीज और अभिलेख सामाजिक संरचना, व्यापारिक लेन-देन और धार्मिक प्रथाओं का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इन अभिलेखों से पता चलता है कि भारतीय समाज में व्यापार, शिक्षा, शासन और पूजा के नियम स्पष्ट रूप से प्रचलित थे। इसके अतिरिक्त, अशोक के धर्मलेख और समुद्रगुप्त की प्रशस्तियाँ न केवल धार्मिक और नैतिक शिक्षा प्रदान करती हैं, बल्कि शासन, सामाजिक जीवन और शासकीय आदर्शों का भी चित्र प्रस्तुत करती हैं।

लेखन और अभिलेखन के माध्यम से भारतीय संस्कृति ने ज्ञान, नैतिकता, धर्म और कला के प्रसार को सुनिश्चित किया। यह संस्कृति की निरंतरता, सामाजिक नियमों की संरचना, धार्मिक सहिष्णुता और मानवता के सार्वभौमिक मूल्य स्थापित करने में सहायक रहा। भारतीय संस्कृति में लेखन केवल जानकारी का संचार नहीं, बल्कि ज्ञान, अनुभव और सामाजिक अनुशासन का संरक्षक रहा है। यही कारण है कि भारतीय सभ्यता आज भी प्राचीन अभिलेखों और ग्रंथों के माध्यम से अपने गौरवशाली अतीत और सांस्कृतिक मूल्यों को समझने में समर्थ है।

❑❑❑